अध्याय तिसरा

भूमिजा की कथा

अध्याय तिसरा

भूमिजा की कथा

प्राक्कथन :-

रामकथा को प्रगतिशील यथार्थवादी जन दृष्टि से वैचारिक कसौटी पर परखने के उद्देश्य से कवि नागार्जुन ने राम-कथा के तीन प्रसंगों को चुना है। तीनों प्रसंगो अयोध्या के राजतंत्रीय परिसर अथवा लंका विजय यात्रा में घटित होते है। यहाँ राम राजा को मर्यादा से बंधे हुए प्रौढ एवं तथाकथित पुरूषोत्तम राम नहीं है। वे तरूण-सुलभ कौतुहल से आल्हादित दाँव-पेंच से अनभिज्ञ रघुकुलीन अनुशासकीय सीमा से दूर वन प्रान्त में उस युग के महान क्रांतिकारी ऋषि विश्वामित्र से शिक्षा ग्रहण करते हुए मुक्त विचरण करते है। जन-हितैषी गुरूकुल संचालक ऋषियों के यज्ञ की रक्षा करते हुए राक्षसों की मारते है ओर पुरूष वर्ग के अविश्वास से अभिशप्त होकर पाषणी बनी अहल्या को आत्म चेतना दार कर पुर्नजीवित करते है। इन प्रसंगों में राम का व्यक्तित्त्व पूरा का पूरा लोकधर्मी रहा हे, जिसे अभी तक राजधर्म का ग्रहण तक नहीं लगा है।

दुसरी और लोकतंत्री भूमि से उपजी "भूमिजा" सीता है, जिसे अयोध्या बर्दाश्त नहीं कर पायी, ता उसे वाल्मिकी जैसे युग द्रष्टा कवि का आश्रय मिलता है। वह अपने दोनो बच्चों को इसी लोक परिवेश में सामर्थ्यवान बनाती है। उन दोनों बच्चों को प्राप्त लोक संस्कार अयोध्या की झूठी मर्यादा को तोडने और राजधर्म को लोक धर्म में बदलने में अवश्य ही समर्थ हुआ होगा। इस और कवि ने संकेत करना चाहा है। उन्होंने दिखाया है कि लव-कुश का व्यक्तित्त्व राम लक्ष्मण की तुलना में तनिक भी छोटा नहीं पडता है, वरन् ज्यादा प्रभावपूर्ण लगता

है। इस दृष्टि से तुलना करने पर कवि का उद्देश्य परिलक्षित हो जाता है कि जिस रघुकुल रीति-नीति और प्रीति की बात अथवा रामराज्य के आदर्श की बात होतो आई हैं, वह सीता के त्याग, तपस्या और साधना के समक्ष फीका है।

"भूमिजा" के राम पूरी राम-कथा के राम से अधिक जनोनकुल अन्ततः शाश्वत एवं सनातन है। लोक धर्म की इसी कसोटी पर कसने के लिए कवि नागार्जुन ने चतुर जोहरी की भाँति राम-कथा के विविध स्वर्णिम प्रसंगों में उन तीन प्रसंगो को ही चुना हे, जो खुद ही बन गये है।

कथा - प्रसंग :-

रघुकुल कमल दिवाकर राम ओर सुमित्रानंदन लक्ष्मण सरयू तट पर बालू पर आसन मारे बैठे है। लक्ष्मण की आँखो में आँखे डालकर राम ने कहा भाई, बस यही सीमा समाप्त हो रही है। उस पार से मगध राज्य शुरू हो जायेगा। वहाँ के लोग बडे शुर वीर हैं।

थोडा हटकर गुरूवर विश्वामित्र विश्राम कर रहे है। बायी बाँह पर सिर रखे सीधे बायी करवट लेटे हुए है। पैर, पैर पर और दाया हाथ कमर के दायें भाग पर पडा है। भोजन के बाद दुपहरिया में भला कोन नहीं अलसा जाता है?

कुछ देर बाद हम नदी के उस पार पैर रखेंगे। नाव तैयार ही है। अपना कोसल देश, अपने लोग, फ्ल-फल से भरा अपना प्यारा सरयू जल अभिसिंचित, धन-धान्य-पूर्ण सुर-नर-मुनि सबके मन मोहने वाली मातृभूमि हमसे दूर हो जाएगी। राम भाव - विवल होकर दुख प्रकट कर रहे है कि फिर कब दर्शन हो पायेगा।

राम की विह्वलता देख लक्ष्मण भी आकुल हो उठते है। सचमुच ऐसा सुन्दर, ऐसो उर्वर अपनो प्यारी भूमि, ऐसो मिट्टी त्रिभुवन मे कहाँ मिलेगी।

दोनो भाई यद्यपि विश्वमित्र जैसे महर्षि के साथ हैं। उनसे देश-काल और पात्रों का ज्ञान मिल रहा है। कहानियाँ सुनने को मिल रही है। लेकिन जब भी बूढे पिता दशरथ को भीगी-भीगी आँखे और माताओं के दुख से कुम्हलाये मुँह याद आते है, कलेजा फटने लगता है। हालांकि वे बाहर घूमने की तरूण सुलभ जिज्ञासावश यहाँ आने के लिए खुशी-खुशी तैयार हो गये थे। अब दोनों भाई व्यथित हो रहे हैं। आँखे भर आई है, धीरज का बाँध टूट रहा है, लेकिन खामोश है।

इसके बाद विश्वामित्र के साथ वे हंस की तरह दिखनेवाली नौका पर सवार हो सरयू और गंगा के संगम को पार कर रहे है। प्रमुनि समय के उद्गम और भगीराथ द्वारा लायी गई गंगा की महिमा ओर इतिहास बता रहे है। अपने पूर्वतों का गुणगान सुनकर राम लक्ष्मण के कान तृप्त हो रहे है।

नाव किनारे लगी। तीनों उतर गये। विश्वमित्र के कहने पर राम ने गंगा को प्रणाम किया, मन ही मन उनकी प्रार्थना की जिनके दर्शन, मज्जन, पान से तीनों के ताप मिट जाते है। युग-युग से संचित पाप धूल जाते है। जिनकी गोद में वंशधरो की आस्थि समर्पित है, उस गंगा को राम लक्ष्मण सहित जल चढाते है। इसके लिए सुर-नर-मुनि-विद्याधर यक्ष भला कौन लालायित नहीं रहता? गंगा अपने किनारे के खेतों में अपना पवित्र महिमामय पंक पसार देती है, जिसमें इतना अन्न उपजता है कि इस प्रांत में कोई भूखा नहीं रहता।

उपर आसमान साफ है। फिर भी कीचड में सडी घासपास की दुर्गन्ध नाक में घुस रही है। रास्ता खुरदरा है पाँव में चुभ रहा है। नदी की धार पतली होती गयी है। किनारे पर हलकी दरारो को देखकर लगता है कि जैसे सीधी-तिरछी लिपियाँ हो। निश्चय ही आगे कुछ गाँव होंगे। दोनो भाई शौचादि कर्म से निवृत्त होकर विश्वमित्र के पीछे पीछे चलकर भयानक जंगल में जा पहुँचते है। चारों ओर झाडझंझाड, बूढे वृक्षों से लिपटी मोटी लताएँ है, मानो अजगर हिल-डुल

रहे हो। झींगुरों की लगातार झें-झें, कुत्तों की भों-भों के बीच सड़ी लाशों की दुर्गंध झेलते हुए शून्य अँधेरे मे तीनों चुपचाप बढ़ते हुए जंगल से पार हुए। फिर वही ठहरने का विचार कर रूक गये।

इधर-उधर से ढूंढकर लक्ष्मण कन्द-मूल-फल ले आये। लकडी और पानी ले आए राम। पत्थर से आग निकालकर धूनी जला दी गयी। कुछ खा-पीकर तरोताजा हो मुनि के पाँव दबाने बैठे गये। हाथ-पाँव धो केवल जल ग्रहण कर मुनि मृगछाल पर लेटे थे। उन्होंने ताड़का की चर्चा आरंभ की। ताड़का बडी भयानक राक्षसी हैं। दस हाथियों का बल रखती है। इस वन पर उसका ही अधिकार है। हाहाकर मचा रखा है। आसपास की आबादी उजाड़ डाली है। पशु-पक्षी भी इधर नहीं फटकतें। कंकालो का ढेर लगा हैं। दुर्गम वन में आतंक का यह अंधेर दिन में देखना। उसी के भय से हमने भी चोरों की तरह चुपचाप जंगल पार किया। बच्चे, बुढे, रोगी अथवा तूले-लंगडे, गर्भिणी माताएँ, मुस्कुराते शिशु वह किसी को नहीं छोडती। तामसी वृत्तियों वाली वह राक्षसी भक्ष और अभक्ष कुछ भी नहीं मानती।

मुनि कहानियाँ सुनाते गए। रात आधी बीत गई। पेड-पौधे, पशु-पक्षी, सारा संसार ही अंधकार और नींद में मानो आतंक से दम साधे पड़ा था। आकाश तारों से भरा मानों साँवरी देह में आँखे ही आँखे हैं। भूत-प्रेत, राक्षस, बनैले जन्तू निर्भय घूम रहे है। तभी सूखें पत्ते ओट से पीला पड़ा शरद का चाँद उग आया। कृष्ण पक्ष का दशमी का यह सौंदर्य मन में उल्लास नहीं जगा पा रहे। आतंक का ऐसा साम्राज्य है। तभी मुनि ने उन्हें सो जाने को कहा क्योंकि रात आधी बीत चुकी।

प्रसंग - 1

मुनिवर गौतम आम के वृक्ष की छाया में आसन मारें ध्यान मे डूबे बैठे है। पोखरे के बीच में नींद में पडी जैसे एक मछली हो, मुनि हिल डुल

तक नहीं रहे है। राम और लक्ष्मण के हाथ जुड़ जाते हे, श्रध्दा से माथा झुक जाता है। उसके मन में तरह-तरह के विचार उठने लगते है। जिस महामुनि का नाम बहुत दिनों से कानों को तृप्त करता आ रहा था, आज उनके दर्शन करने नयन भी तृप्त हुए। किंतु आश्रम का सूनापन और कुटियों की अस्त-व्यस्तता खल रही थी। मृग-छाला, वल्कल परिधान अथवा पशुओं के लिए चारा कुछ भी तो नही था वहाँ। फल-फूल विहीन पुराने सूखे, कोडे खाये हुए पेड थे - जिन्हें देखकर लगता था, जैसे तपेदिक से पीडित युवक हों।

आँगन से हटकर थोडी दूर पर उत्तर की ओर एक झोंपडी थी। वहाँ का दृश्य देखकर दोनों भाई ठिठक जाते हैं। ग्लानि और क्षोभ के करूण प्रतीक जैसे एक नारी प्रतिमा पथराई-सी जमीन पर पडी थी। राम को जैसे काठ मार गया। धम् से जमीन पर बैठे गये। इसे देखकर लक्ष्मण भी हतप्रभ और व्यथित हो धीरज बंधाते हुए जमीन पर धनुष रखते हुए राम से बोले -

"साधारण-सी इस प्रतिमा में, आर्य।
क्या है जिससे हुआ आपको खेद?"[1]

राम ने आभूषण से चमकते हुए दाहिने हाथ को उठाकर शांत रहने का संकेत किया और अपनी दृष्टि उस पाषाणी प्रतिमा के मुखमंडल पर जमा दी। फिर पास जाकर मूर्ति का स्पर्श करने लगे। सिर से लेकर तलवे तक अंग-अंग पर स्नेह से हाथ फेरते है। तभी राक्षसी लीला की तरह हड्डियों के पथराये हुए उस ढाँचे में कम्पन हो आया। राम रोमांचित हो उठे। लक्ष्मण की ओर देखा, लक्ष्मण भी जैसे कुछ बोल न सके। अग्रज से आदेश पाने के लिए उत्सुकता से प्रतिक्षा करते रहे।

प्रतिमा को आँखे खुली, फिर दृष्टि का दीपक टिमटिमा उठा। आँखो के गढ़े में रोशनी लौट आयी। होंठ फड़क उठे। जब राम ने उनका स्पर्श अपने कर पल्लव से कराया, प्रतिमा बोल उठी - "पाषाणी में प्राण संचार करनेवाले

हे देव। मेरे हृदय के आधारपर घनश्याम स्वरूप आप कौन है? दानव क्रूर होते है तो देवतागन धूर्त, किन्नर और गंधर्व स्थिरमति नहीं होते तो मानव भी पूरे शक्की और हृदयहीन होते है। साथ ही थोडा-सा ज्ञान होने पर भी गर्व में झूमते रहते है। सुना है आदि वैध धन्वन्तरि के कर पल्लव के स्पर्श से अमरत्व की प्राप्ति होती है।"[2]

विनीत भाव से उत्तर देते हुए राम ने कहा कि वे कौशल्यापति दशरथ के पुत्र है। राम और लक्ष्मण छोटा सा नाम है। इधर राक्षसों ने भीषण उत्पात मचा रखा था। कोई भी यज्ञ सम्पन्न नहीं होने. देते थे। उन दुष्टों को ही ठिकाने लगाने के लिए हमें पिताजी से माँग कर कौशिक मुनि विश्वामित्र ले आये। वे राक्षस सब मारे जा चुके है। विधिवत् सारे यज्ञ संपन्न हो चुके है। देवताओं ने अपने अपने भाग पाये। हमें ढेर सारा आशिर्वाद मिला। उन्हीं महाकुलपति मुनि विश्वामित्र से आदेश लेकर हम इधर घूमने निकले है। आज हमारा दसवाँ दिन है। इस कुटी में आया, आप स्वस्थ हुई। हमारा अहोभाग्य। कृपा कर अपना नाम, गोत्र, और कुल तो बताइए। किस अभिशापवश आप पत्थर हो गयी?

सचल हुई पाषाण मूर्ति भाव में बह चली, बोलती चली गई कि वह गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या है। मूनि के शापवश वह कठुआ कर पाषाण हो गयी। मुनि के वेश में रूप बदलकर इन्द्र अहल्या के पास आते रहे। उसने उस छल को नही समझा। फिर इस पाप का भागी वह कैसे हो भला। जब पति का रूप धर कर कोई उसकी पत्नी के पास आकर छल करे तो इस परसंगति से वह वेश्या तो नहीं हो जायेगी। इसमे उसका क्या दोष। लेकिन मुनि गौतम इस छलसत्य को बर्दाश्त नहीं कर पाये। उसे दूषित, कुलटा, निर्लज्ज कहते हुए गुस्से से काँपते हुए, धिक्कारे गए और इधर अहल्या का पति को समर्पित शरीर अन्दर से टुकडे-टुकडे होता गया। उपर से लज्जा, क्षोभ, ग्लानि, रोष एवं पश्चाताप के गरल की घूँट से जमता चला गया। जीभ ऐंठ गयी, बोल बन्द हो गये। शरीर की गति रूक गयी और धरती पर गिर पडी। भला जब पत्नी को पति

हो न समझ पाये, उसकी खोज-खबर न रखे तो पत्थर कैसे न हो जाए। उसे पुरुष वर्ग से घोर घृणा हो गयी है। लेकिन आज राम ने अन्दर-बाहर से उसे बदल डाला। इन शब्दों में अहल्या राम के प्रति आभार प्रकट करती हुई यशस्वी होने का आशिर्वाद देतो हुई कहती है कि उपेक्षित इस निर्जन कुटिया में टूटे दीप्रक की सूखी बाती को स्नेह से भिगो कर ज्योति, दान देने की राम को यह अद्भुत कहानी सुनकर सारा संसार पुलकित हो उठेगा। पुलकित रोम-रोम से अहल्या राम के आगे साभार झुक जाती है -

"जय जय हे कौशल्यानंदन राम
पाषाणी करती है तुम्हें प्रणाम····"[3]

राम अहल्या के आँसू पोंछते हुए, श्रध्दा और ममता भरे शब्दो में कहते है - हे देवी, मत रोएं, अब से आपको कोई कष्ट न होगा।

अहल्या कृतार्थ हो गई। कृतज्ञता से गद्गद होती हुई बोली - "भैया, जब तक तुम्हारे जैसे लोग अभिशप्तों के दुख हरने के लिए पृथ्वी पर है, कष्ट कैसे होगा? मुनि-पत्नी बार-बार आशिर्वाद देती रही, आभार प्रकट करती रही कि धन्य हैं राम जिनके कर-कमलों के स्पर्श ने पत्थर मे जान डाल दी।

राम अहल्या को आश्वस्त एवं स्फूर्त करते हुए उत्साह देते हैं कि माँ। आप तो पत्थर हुई ही नहीं थी। मरुभूमि में जमीन के नीचे बहनेवाली धारा की तरह ऊपर से बेजान लग रही थी। मुझे तो पहले ही विश्वास हो गया था कि आप पाषाण को प्रतिमा पाषाणी नहीं, मूर्च्छाग्रस्त मानवी है। आपको पति द्वारा दिया गया अनुचित शाप कैसे छू सकता था भला। सपने में भी कभी पाप नहीं किया आपने बे-दाग शत-प्रतिशत शुध्द थीं आप। इस तरह अहल्या को समझाते हुए राम श्रध्दा से उसकी प्रदक्षिणा करते हैं और भक्ति से झुककर प्रणाम करते हैं।

तभी अहल्या प्रयास करके किसी तरह उठ बैठती है। रूखा-सुखा शरीर रक्तविहीन उजली पडी धमनियो का जाल मात्र रह गया हो। दायाँ हाथ उठाकर

धीरे-धीरे बोलती चली गयी - "बेटे, राजपुत्र हो तो अवध के राजा बनोगे ही। फिर तो तुम्हारे भी चरणों पर देश-विदेश से आए बिना सूँघे हुए, बिना छुए हुए सैकडों कमनीय फूल चढ़ाए जायेंगे। अन्दर महल में षोडशियों के साथ अलग-अलग मौसमों का मजा लेते हुए समय बिताओगे। तब यह अहल्या थोडी ही याद रहेगी।"

यह सुनकर राम दाँतो तले जीभ दबा लेते है। हाथो से दोनों कान छूते हुए संकल्प भरे स्वर में बोल पडते है - "नहीं! नहीं! माँ, यह क्या कह रही हो! रघुवंशी ऐसी भूल कभी नहीं करते।

रघुवंशी राम प्रतिज्ञा करते है कि अहल्या को याद रखते हुए नारी के प्रति कभी भी क्रूर नहीं होंगे। न तो दुसरा विवाह ही करेंगे। एक पत्नीव्रत पर आरूढ रहेंगे। जो सैकडो कमनीय फूल चढाने के लिए लाये जायेंगे, उनका स्पर्श तक नहीं करेंगे। फूल तो फूल है। धरती माता के शृंगार के लिए खिलते है। अपने पेडों से लगे हुए ही सुंदर लगते है। राम आगे प्रण करते हैं कि वे अपने यहाँ षोडशियों का मेला नहीं लगने देंगे। खरीदी हुई दासी तक का -अपमान नहीं करेंगे। ऐसा विश्वास दिलाते हुए जब राम मुनि पत्नी के दोनो पाँव छूते है तो अहल्या का मातृत्व उमड पडता है। कहती है - "धन्य है कौशल्या जिसकी कोख से ऐसे बेजोड हीरा ने जन्म लिया। महाराज दशरथ भी धन्य हैं, जिनका नाम राम से उज्वल होगा। साथ ही धन्य है वह अयोध्या भूमि जिसने ऐसा राजकुमार पाया। युग-युग जिओ। तुम्हें पाकर प्रजा कभी टुअर नहीं होगी। मुनि-पत्नी बोलती चली गयी और स्नेह से राम को सूँघती रही। पीठ पर हाथ फेरती रही। हाथ जोड सिर झुकाए खडे रहे राम।

बहुत-बहुत शुभाशिर्वाद ग्रहण कर धनुर्धर राघव जनकपुर की ओर चल दिए। पीछे-पीछे लक्ष्मण भी चले।

प्रसंग - 3

"भूमिजा" नामक प्रबंध कविता का प्रसंग सीता वनवास काल से लिया गया है। पूरा प्रबंध आत्मालाप शैली में है। क्रमशः स्वयं सीता, फिर त्रिजटा और अन्त मे वाल्किमी स्वतः स्फूर्त अभिव्यक्त होते हैं। तीनों कड़ियों के जुड़ जाने से भूमिजा का आख्यान पूर्ण होता है।

लंका विजय के उपरान्त वनवास के चौदह वर्ष पूरे कर अयोध्या वापस आकर राम गद्दी पर बैठते है। इसके बाद ही रामायण का सबसे दुखद अध्याय प्रारंभ होता है। जिस सीता के लिए लंका कांड के रूप में इतना बडा संग्राम हुआ, उसी सीता को प्रजा-वर्ग से एक धोबी द्वारा उनके लंका निवास-अवधि के संदर्भ में लांछित किए जाने के कारण पुनः वनागमन करना पड़ता है।

वन में सीता को रामायण प्रणेता महामुनि वाल्मिकी के आश्रम में स्नेहाश्रय प्राप्त होता है।

रावण की पराजय के बाद राम के शिबिर में आने के बाद सीता ने अग्नि-परीक्षा द्वारा अपनी पवित्रता प्रमाणित कर दी थी। फिर भी उसे अयोध्या आने पर अपने ही लोगो द्वारा चरित्र पर उँगली उठाये जाने की वजह से यह दिन देखना पड़ा। इसका उस पर बहुत गहरा असर हुआ। सीता रघुकुल की एकपक्षीय मर्यादा और न्याय के प्रति व्यंग्यपूर्ण नारी-सुलभ आक्रोश व्यक्त कर रही है। आखिर वह बार-बार अपनी पावनता, अपनी चारित्रिक शुध्दता के पक्ष में सफाई क्यो दे? इतिहास में अपना नाम अंकित करवाने वाले पुरूषोत्तम राजा अपनी कीर्ति की रक्षा कर रहे है तो सीता जैसे सामान्यजन को क्या लेना-देना है। राजतंत्र में पोषित राम की नीति के विपरीत सीता अपने को लोक कुल में पनपे हुए घास की तरह देखती है। इस सोच से उसे आत्म मर्यादा का उच्च भाव-बोध होता है। आज उसे अपने जन्म की कथा की याद आ रही है जो जनकपुर में उसकी धाई ने दसियों बार बताया था। सीता किसी के गर्भ से पैदा नहीं हुई

थी। वह भूमि से जन्मी धरती की बेटी है। धरती उसके लिए माँ-बाप बिस्तर बिछावन सब कुछ है। अंत में वही धरती चिता भी बनेगी। जनक तो उसके पालनहार भर थे। उसे खुशी है कि राम का अभिजात कुल सीता को पचा नहीं सका। वह पुनः अपनी माँ के ममतामय आश्रय में लौट आयी है।

सीता के प्रादुर्भाव का प्रसंग है - नदी के किनारे आम के बगीचे वाले खेत में हल जोता जा रहा था। अचानक बैल रूक गये। हलवाहा पसीने से भीग गया। होठों से निकल रहा गीत थम गया। झुककर देखा हल की नोक से लगा ठक्कन से ठका एक ठोस घड़ा निकला। उसी घडे से सीता निकली। खेत में पाई गयी - इसीलिए सीता कहलाई। वह राजा जनक के कुल की संतान नहीं है, भूमिजा है। इस बात को राजा और बाकी सब कोई उससे छुपाते थे। वहाँ रानियाँ, तरूण-तरूणियाँ जो भी थे, सभी उसे जनकनंदनी जानकी समझते थे। वैसा लाड-प्यार भी मिलता था। समस्त दिव्य-सुख उसे सदा उपलब्ध थे। इतना ही नहीं, जैसे-जैसे विद्वान महात्मा और दिव्यजनों का सान्निध्य जनकपुर में मिलता था, वह और कहाँ कही मिला? इस तरह सीता अपनी लोकतंत्री मातृभूमि, विदेहराज जनक और वहाँ के सम्बुध्दजनों की तुलना अयोध्या के कृत्रिम मर्यादा के बने आडम्बर से करती हुई मानो अपने त्रिकाल का लेखा-जोखा कर रही हो और इस मध्य अपने जुड़वा बेटे लव-कुश के विषय मे सोचते सोचते उनमें खो जाती है।

लव और कुश बाधांओ से भरे जंगली बीहड़ पथ पर घूमते रहते है। दोनो वज्र के समान मजबूत है। प्रकृति के प्यारे है। प्रकृति को ही प्यार करते है। इनके लिए साकेत अयोध्या का राजकोय वैभव कृत्रिम है। बाघ के बच्चो से दोस्ती है। तालाब और नदी किनारे का क्षेत्र मानों इनका ही राज्य है। जंगली पहाडी लोग इन्हे चढाव दे जाते है। इनका धनुष चलाना देखकर लोग दंग है। अद्भुत वाक्पटुता की वजह से दूर-दूर तक नाम फैल गया है। सीता सोच रही है कि आज अगर यहाँ गुरूवर विश्वामित्र रहे होते तो इन्हे देखकर उनमें एक

बार फिर उत्साह भर जाता। राक्षसों को मारने के लिए इन्हे साथ लेकर भू-परिक्रमा के लिए फिर निकल पडते और कही न कही स्वयंवरो मे भाग लेने के संयोग भी मिलते। फिर से इतिहास ताजा होता। फिर से राजगद्दी और वनगमन आदि का नाटक दुहराया जाता। लेकिन तब वन भेजने के आदेश की वजह क्या होती? के आदेश की वजह क्या होती?

सीता यहाँ पर आकर ठमक जाती है क्योंकि कलंकिनी का पुत्र अयोध्या का राजा हो इसे वहाँ की प्रजा कैसे बर्दाशत करेगी। फिर से राम उदिग्न होकर लक्ष्मण को आदेश नहीं देंगे कि लव-कुश कम से कम दस वर्षो के लिए वनवास ग्रहण करे। भला अपनी माँ के कलंक को धोनेवाले ये दोनो कैसे शासक हो सकते है? फिर तो अपने पुत्रों को वन जाने का आदेश देकर राम भी अपने आप मूर्च्छित हो जायेंगे। सोता को इस कल्पना से अन्दर ही अन्दर हँसी भी आ जाती है कि मर्यादा-पालक रघुकुल भला पुत्र-बिछोह कैसे सहन कर सकेगा। आज तक रघुकुल के राजाओं ने जन-मन-रंजन इस आचार-संहिता को दुहराया है। यह क्रम किस तरह टूट सकता है भला? बार-बार राजकुमार निर्वासित होते रहें और बूढें राजा मूर्च्छा प्राप्त करते रहें। इससे क्या? भूमि सुता तो एक बार ही पैदा हुई है और वह सूर्यवंश की किसी बहू के रूप में पहली और आखिरी बार अपनी जननी मातृभूमि की शीतल गोद में अन्तर्धान होगी। सचमुच इसका साक्षी आकाश, चंद्र, सूर्य, तारे और गंगा की धारा ही होगी।

ऐसा सोचते-सोचते सीता युग-परिर्वतन के उस दौर की कल्पना करने लगती है जब आडम्बर प्रवाद और झूठी प्रतिष्ठ को कही जगह नहीं मिलेगी। जब सभी सच बोलेंगे, झूठ मोम की तरह गल जायेगा। सभी को न्याय सहज सुलभ होगा। हर कोई स्वतः अनुशासनबध्द रहेगा। राजा अपवाओं पर ध्यान न देंगे। जन-जीवन में ग्लानि होगी ही नहीं। सही जाँच-पडताल के बाद ही किसी को दोषी सिध्द किया जा सकेगा। नर-नारी दोनों के लिए मर्यादा, न्याय, विद्या, बुध्दि, विवेक समान होंगे। घर में सोना-चांदी, अन्न-वस्त्र आदि कुछ

हो, प्रभुता भी हो, यौवन भी हो, किन्तु जन-मन को पहले तो ज्ञान का दिपक चाहिए। ऐसा युग-परिवर्तन कब होगा?

सीता की सोच एक बार पुनः अपने प्राण-प्रिय दोनो बच्चों पर केंद्रित है। लव-कुश अभी दूध पीते शिशु हो थे तभी छाती सूखने लगी। स्नेह-स्त्रोत सूख गया था। दो-चार बूंद ही दूध उतर पाता, फिर भी तापसियों ने इतने प्यार से इन्हें पाल-पोसकर बडा कर दिया। किस-किसने इन पर स्नेह न बरसाया। सब कुछ याद आ रहा है आज। लव-कुश शुरू से ही बडे तेज थे। पंचतत्व बोध तक उन्हें उसी समय प्राप्त हो गया। किस प्रकार इन्होंने बोलना सीखा, तुतलाने लगे, माँ को पहचाना, चलने-फिरने ओर मुनि कुमारों से हिल-मिल गये। सब कुछ सीता की भाव-भूमि पर रील की तरह चलते रहे।

लव शुरू से ही चंचल था। मृग-छौनों की आँखे नापा करता था। भील बालकों के साथ जंगल चला जाता। जाने कितनी बार बाघ के बच्चे पकड कर लाता और फिर उन्हें छोड आता। मुनि कन्याएँ उसे बराबर छेडती रहती। दूसरी ओर कुश कम बोलना, शान्त, गंभीर रहता। दोनों में तुरन्त बात समझ लेने की अद्भुत क्षमता थी। दोनों का बडा तेजी से विकास हुआ है। तभी तो सभी इतनी तारीफ करते है। खुश-दिल दोनों बच्चे केवल अपनी माँ की तकलीफों के विषय में उदास हो जाते। उस समय उनके चांद-से प्यारे मुखडे को ग्रहण मार जाता। दुख से कमल नेत्रों को मानो पाला मार जाता। सीता उनकी कुम्हलायी सूरत सह नीं पा रही है।

तभी सीता को याद आता है, एक बार क्षेमा नामक मुनि कन्या ने उदास लव को टोका था कि वह तपोवन से कहा-कहा भील बालकों की संगत में क्यों रहता हैं? यह स्वेच्छाचार इस ऋषि कुल की परम्परा के अनुकूल नहीं है।

किशोर लव-कुश तरूण तपस्वी की तरह लग रहे हैं। इन्हे देखकर त्रिजटा भ्रम में पड़ जाती है कि ये हैं कौन? इस उम्र में मुनि विश्वामित्र के साथ राम भी तो ऐसे दीखते होंगे। वैसा ही मुहँ, वैसा ही साँवली सूरत। कानों में लटके हुए छोटे-छोटे रूद्राक्ष, सिर पर सुनहरी जटाएँ, कमर में लिपटी हरिण की छाल, पैरो में लकड़ी की खड़ाउँ, कमल-नयन, चंद्र-मुहँ, लंबे कान, शंख सी गर्दन, चौड़ी छाती, सुन्दर नाभि , लम्बी भुजाएँ····· कौन हैं ये?

त्रिजटा सीता की जिज्ञासा करने के लिए चली आई थी। रात्रि के अन्तिम पहर में बुरा स्वप्न देखा था कि उसकी सखी बाढ़ में डूब गयी है। हाल-चाल लेने के लिए राक्षसी त्रिजटा लंका से यहाँ तमसा तट पर पहुँची थी। तभी उसनें इन कुमारों को देखा और सोचने लगी कि ये बालक उस अफवाह को मिटा कर रहेंगे - जिससे उनकी माँ गले जा रही है। और फिर लक्ष्मण क्षमा माँगने आएँगे। राम सिर झुकाये खामोश रहेंगे। जानकी अयोध्या लौट जायेगी। जुड़वाँ भाईयों पर दूर्वाक्षत और आशीर्वाद की वर्षा होगी। इनका युवराज की तरह तिलक होगा। उत्सव में गूँजते संगीत में सरयू तट पर बसा साकेत आप्लावित हो उठेगा। रघुकुल की यशोगाथा वीणा पर मुखारित होने लगेगी।

तमसा का यह तटीय क्षेत्र सूना पडा है। महाकाल राम कथा का अंतिम दृश्य दिखाकर अपना खेल खत्म कर चुका है। सीता के आश्रयदाता राम कथाकार महाकवि वाल्मीकि अपनी कुटिया के बाहर सारी रात शोक में डूबे खोये-खोये से किंकर्तव्यविमूढ़ खड़े रह गये। वसंत के प्रभातकालीन सौंदर्य को देखता हुआ चाँद पीला पड़ गया। बदले हुए समय का संकेत मन में टीस उभारता रहा। बार बार मुनि को याद आ रहा है। भूमिजा सीता का अपनी पावनता का अवसाद भरा अवशेष संसार में छोडकर धरती माँ की गोद में सदा के लिए समा जाना। कैसा लगा था उस समय, कैसे दृश्य, कैसा अनुभव··· मुनि वाल्मीकि भी कुछ नहीं कर पाये। संज्ञाशून्य मूर्तिवत खडे के खडे रह गये थे, एक ऐसी मानवमूर्ति के समान जिसकी दाढी के कुची से शरीर के रोयें तक पर सफेदी-सफेदी

कर दी गयी हो। लटका हुआ चमड़ा, पका हुआ किंतु छरहरा बदन पत्थर ही तो हो गया था। आतंकित पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े, सर्पादि सभी दूर-दूर से ही तमाशा देखते रहे, कोई पास तक नहीं फटका। वाल्मीकि के अंदर का कवि खामोश देखता रह गया और सीता अभिनव इतिहास सिरज गयी। तब से कवि की आँखो में आँसू रूक नहीं पा रहे थे। इतना ही नहीं, तमसा भी अपनी पीडा को दबा नहीं पायी।

भूमि समाधि के पूर्व धरती फाड़कर फेनिल जलधारा निकलने लगी थी, चारों ओर प्रकाशमय धूल उड़ रही थी। धरती फटी थी, आकाश तक गूँज गया था और ध्यानमग्न सीता भूमि-गर्भ में अपने आप समा गयी थी। आपने आप दरार के दोनो पाट जुड गये। फिर तो इस भू-कम्प का कोई चिन्ह नहीं रहा था। चारों ओर बालू के ढेर, दस-बीस चमकते हुए पत्थर के टुकडे कुछ पीले, कुछ मोती की चमक वाले, चंदनगंधी कीचड़। हर्ष-विषाद का अद्‌भुत दृश्य और सुरभि से मन-प्राण भर रहा था।

वाल्मीकि की चेतना लौटने लगती है और सोचने लगते है कि कैसा परिवर्तन हो गया है। जो कल तक थी और आज नहीं है। हमें विवश छोड़कर चली गयी। तमसा तट पर यह उपवन, नदी का प्रवाह गूँगा हो गया, बूढ़े बरगद विषाद में डूबे है। पीपल के नये पत्तें भी जैसे पीड़ा में झुलस जायेंगे। अब उन्हें संभालनेवाला ही कौन रहा। सीता के पालतू पशु फिर जंगली बन जायेंगे। हरिण के बच्चे की पीठ अब कोन थपथपा पायेगा। निश्चय ही वह भूखी बाघिन का शिकार हो जायेगा। गाय-हेमवती बीमार हो जायेगी। अपनी बछिया को दूध भी पीने नहीं देगी सब अस्त-व्यस्त हो गया है।

वात्सल्य-विव्हल बूढ़े वाल्मीकि जैसे स्मृति शेष के संवाद से राम कथा का उपसंहार करते हुए फूट पडते हैं - बेटी, अब तुम पीडा के परिसर से सदा के लिए निकल कर अपनी माँ की कोख में फिर समा गयी हो। वहीं चिरकाल

तक विश्राम करती रही। यह सुनकर शायद निष्काम राम को दुख न होगा। लक्ष्मण को लेकिन भारी धक्का लगेगा। लव-कुश साकेत लौट जायेंगे। यहाँ इस उजाड को भागने के लिए ठूँठ की तरह मैं अकेला रह जाऊँगा। पशु-पक्षी, पेड़-पौधे समस्त प्रकृति अनुशासन भुलकर स्वच्छंद हो जायेंगे। ऋतुओं के स्वेच्छाचारी साम्राज्य में सझ-बूझ और श्रम से संघटित मानव-समाज का कोई चिन्ह शेष न रहेगा। शेष रह जायेंगे केवल प्राकृतिक दृश्य।

उपसंहार :-

कविवर नागार्जुन ने तीन महत्वपूर्ण प्रसंगों के द्वारा "भूमिजा" का कथा संगठन किया है। पहला प्रसंग महर्षि विश्वामित्र द्वारा महायज्ञ की रक्षार्थ राम-लक्ष्मण का वन-गमन। दुसरा प्रसंग अहल्या उध्दार का है। तीसरा प्रसंग राम द्वारा सीता का त्याग तथा सीता के व्यंग्यपूर्ण आलोचना तथा लव-कुश के विकास तथा उनके भविष्य का जो त्रिजटा देखती है। अंत में महाकवि वाल्मीकि द्वारा रामकथा का उपसंहार तथा सीता के बिना अकेलेपन का एहसास है। इन प्रसंगो को बडे ही स्वाभाविक, शब्दावली मे नागार्जुनजी ने बाँधा है।

"भूमिजा" की सीता आधुनिकता का बोध देना चाहती है। वह एक नए युग की माँग करती है। उस युग की कल्पना में नव्य चेतना की तरफ उसका संकेत भी बुध्दीमत्ता का लक्षण है। उसके मतानुसार नए युग में झूठी प्रतिष्ठा को जगह नही होनी चाहिए, सभी को न्याय सहज मिलना चाहिए, सही जाँच पडताल के बाद ही किसी को दोषी ठहराया जाए। नर-नारीमें समानता हो तथा एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि सभी को ज्ञान का दिपक आवश्य मिलना चाहिए।

आज हमारे देश में क्या इनकी आवश्यकता नहीं है? नागार्जुन ने नए रामराज्य की कल्पना भूमिजा में देने का प्रयत्न किया है। जो हमारे देश के लिए आवश्यक बात हो गई है। हमारे देश में आज सबकुछ है, परन्तु वह बात आज भी नहीं है जो भूमिजा के सीताने कही है। संपूर्ण भूमिजा की कथा में गतिशीलता, रोचकता, प्रभावोत्पादकता, विषाद का चित्रण बहुत सुन्दर ढंग से किया है।

<u>सन्दर्भ सूची :-</u>

1· प्रसंग दुसरा - पृ· 47

2· वही, पृ· 47

3· प्रसंग दुसरा - पृ·53